Degree-1st Subsidiary

सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा (Concept of Social System)—

सामाजिक व्यवस्था वह स्थिति है जिसमें समाज का निर्माण करने वाले विभिन्न तत्व एवं सांस्कृतिक व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यात्मक रूप से एक-दूसरे से सम्बद्ध रहते हैं तथा एक ऐसे सन्तुलन का निर्माण करते हैं जिसमें विभिन्न संस्थाएँ अपने उद्देश्यों के अनुसार कार्य करके व्यक्तियों की अन्तर्क्रियाओं को नियमित कर सकें।

जोन्स (M.E. Jones) ने सामाजिक व्यवस्था को परिभाषित करते हुए कहा है, "सामाजिक व्यवस्था वह स्थिति है जिसके अन्तर्गत समाज के विभिन्न कार्यशील अंग एक-दूसरे से तथा सम्पूर्ण समाज के साथ अर्थपूर्ण ढंग से (Meaningfully) सम्बद्ध होकर कार्य करते हैं।" जोन्स के इस कथन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक व्यवस्था का अर्थ समाज में केवल सहयोगी तत्वों का ही विद्यमान होना नहीं है। समाज में सहयोगी और विरोधी सभी प्रकार के तत्व क्रियाशील रहते हैं। लेकिन सामाजिक व्यवस्था का तात्पर्य ऐसी स्थिति से है जिसमें प्रत्येक अंग को एक-दूसरे से अन्तर्क्रिया करने और अपने सामाजिक हितों को पूरा करने के अधिकतम अवसर प्राप्त हो सकें। इसी आधार पर पार्सन्स (Parsons) ने सामाजिक व्यवस्था की विवेचना में संस्थाओं के महत्व पर विशेष बल दिया है।

सामाजिक व्यवस्था की अवधारणाओं को समझने के लिए पार्सन्स

Created By Sign Doc

के विचारों का महत्व सबसे अधिक है। पारसन्स का मत है, "एक सामाजिक परिस्थिति में (जिसका एक भौतिक अथवा पर्यावरण सम्बन्धी पक्ष होता है) अब अनेक वैयक्तिक कर्ता सामान्य रूप से स्वीकृत सांस्कृतिक प्रतीकों की व्यवस्था के अन्तर्गत अपने आदर्श लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अन्तर्क्रिया कर रहे होते हैं, तब इसी स्थिति को हम सामाजिक व्यवस्था कहते हैं।" इस प्रकार पारसन्स के ही शब्दों में, "सामाजिक व्यवस्था क्रिया का एक संगठित प्रणाली है जिसमें बहुत से कर्ताओं (actors) की अन्तर्क्रियाओं का समावेश होता है।"

पारसन्स की उपर्युक्त व्याख्या से स्पष्ट होता है कि केवल उसी स्थिति को सामाजिक व्यवस्था कहा जा सकता है जिसमें निम्नांकित तत्व पाये जाते हों:

(1) अनेक वैयक्तिक कर्ता — कर्ता का तात्पर्य व्यक्ति की उस मानसिक स्थिति से है जिसके द्वारा वह किसी स्थिति के प्रति चेतन रहता है और उसके बारे में विचार करता है। सामाजिक व्यवस्था का सम्बन्ध बहुत से व्यक्तियों से है केवल एक या दो कर्ताओं से नहीं।

(2) कर्ताओं के बीच अन्तर्क्रियाएँ — सामाजिक व्यवस्था का निर्माण निष्क्रिय कर्ताओं से नहीं होता बल्कि जब बहुत से कर्ता एक-दूसरे की स्थिति को समझते हुए अर्थपूर्ण रूप से अन्तर्क्रिया करते हैं केवल तभी व्यवस्था की सम्भावना की जा सकती है।

(3) अन्तर्क्रियाओं का एक आदर्श लक्ष्य — अन्तर्क्रियाओं के पीछे समाज द्वारा स्वीकृत लक्ष्यों का होना आवश्यक है। इसी के फलस्वरूप विभिन्न कर्ताओं में सहयोग

Created By Sign Doc

रहता है और इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था को स्थायित्व मिलता है।

(4) सामाजिक परिस्थिति — कोई भी अन्तर्क्रिया कर्ता की सामाजिक परिस्थिति (Social situation) के सन्दर्भ में होती है। सामाजिक परिस्थिति का तात्पर्य कर्ता के पर्यावरण सम्बन्धी उस पक्ष से है जिससे प्रभावित होकर ही वह विभिन्न क्रियाएँ करता है। यह परिस्थितियाँ अनुकूल भी हो सकती हैं और प्रतिकूल भी। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था का सम्बन्ध प्रतिकूल परिस्थितियों के सन्तुलन से है।

(5) सांस्कृतिक नियमन — उपर्युक्त तत्वों से बनी सामाजिक व्यवस्था तब तक संगठित नहीं रह सकती जब तक वैयक्तिक कर्ताओं की क्रियाओं पर कुछ सांस्कृतिक नियन्त्रण न हो। यही कारण है कि प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था अपने सदस्यों को सामान्य रूप से स्वीकृत सांस्कृतिक प्रतीकों के अनुसार अन्तर्क्रिया करने को बाध्य अथवा प्रोत्साहित करती है। यह सामाजिक व्यवस्था का संस्थात्मक पक्ष (Institutional aspect) है।

Created By Sign Doc